E-ISSN: 2664-603X
P-ISSN: 2664-6021
IJPSG 2025; 7(12): 16-20
www.journalofpoliticalscience.com
Received: 18-10-2025
Accepted: 23-11-2025

अनीश कुमार
पीएच.डी. रिसर्च स्कॉलर, राजनीति विज्ञान विभाग, दिल्ली विश्वविद्यालय, नई दिल्ली, दिल्ली, भारत।

Corresponding Author:
अनीश कुमार
पीएच.डी. रिसर्च स्कॉलर, राजनीति विज्ञान विभाग, दिल्ली विश्वविद्यालय, नई दिल्ली, दिल्ली, भारत।

मुक्ति के साधन के रूप में शिक्षा: महिलाओं और दलितों के उत्थान में ज्योतिबा फुले का योगदान

अनीश कुमार

DOI: https://www.doi.org/10.33545/26646021.2025.v7.i12a.767

सारांश

महात्मा ज्योतिबा फुले (1827-1890) भारत के सबसे परिवर्तनकारी समाज सुधारकों में से एक के रूप में उभरे, जिन्होंने सदियों से चले आ रहे व्यवस्थागत उत्पीड़न से हाशिए पर पड़े समुदायों को मुक्ति दिलाने के लिए शिक्षा को एक बुनियादी साधन के रूप में इस्तेमाल करने का बीड़ा उठाया। यह लेख 19वीं सदी के महाराष्ट्र में महिलाओं और दलितों की शिक्षा में फुले के क्रांतिकारी योगदान की पड़ताल करता है, और विश्लेषण करता है कि कैसे उनके शैक्षिक दर्शन और व्यावहारिक पहलों ने मौजूदा सत्ता संरचनाओं को चुनौती दी और सामाजिक गतिशीलता के मार्ग प्रशस्त किए। विद्वानों के स्रोतों और ऐतिहासिक दस्तावेजों के आधार पर, यह अध्ययन फुले द्वारा लड़कियों और दलितों के लिए भारत के पहले स्कूलों की स्थापना, शिक्षा में ब्राह्मणवादी आधिपत्य की उनकी आलोचना और समावेशी शिक्षाशास्त्र के उनके दृष्टिकोण का अन्वेषण करता है।

यह शोध दर्शाता है कि कैसे फुले के शैक्षिक हस्तक्षेपों ने न केवल साक्षरता और ज्ञान तक तत्काल पहुँच प्रदान की, बल्कि उत्पीड़ित समुदायों में आलोचनात्मक चेतना को भी बढ़ावा दिया। इसके अलावा, यह लेख भारत के शैक्षिक परिदृश्य में व्याप्त असमानताओं को दूर करने में फुले के शैक्षिक दर्शन की समकालीन प्रासंगिकता की जाँच करता है, विशेष रूप से हाल की नीतिगत पहलों और हाशिए पर पड़े समूहों के सामने आने वाली चुनौतियों को ध्यान में रखते हुए। प्राथमिक और द्वितीयक स्रोतों के व्यापक विश्लेषण के माध्यम से, यह अध्ययन तर्क देता है कि फुले की शैक्षिक विरासत शैक्षिक न्याय और सामाजिक परिवर्तन की दिशा में आधुनिक प्रयासों को प्रेरित करती रहती है, और सभी समुदायों के लिए अधिक न्यायसंगत शिक्षण वातावरण बनाने के लिए प्रतिबद्ध समकालीन शैक्षिक सुधारकों और नीति निर्माताओं के लिए मूल्यवान अंतर्दृष्टि प्रदान करती है।

शब्द-कुंजी : मुक्ति, शिक्षा, महिलाओं, दलितों, ज्योतिबा फुले का योगदान, शैक्षिक विरासत शैक्षिक न्याय और सामाजिक परिवर्तन

प्रस्तावना

महात्मा ज्योतिबा फुले (1827-1890) भारत के सबसे क्रांतिकारी समाज सुधारकों में से एक हैं, जिनके शिक्षा के प्रति दूरदर्शी दृष्टिकोण ने 19वीं सदी के महाराष्ट्र और उसके बाद के हाशिए पर पड़े समुदायों के जीवन को बदल दिया (वुल्फ, 2008; नटराजन, निनान, 2011) [40]। लड़कियों और दलितों के लिए भारत के पहले स्कूलों की स्थापना के माध्यम से, फुले ने ब्राह्मणवादी आधिपत्य को चुनौती दी, जिसने सदियों से इन समुदायों को शिक्षा के अवसरों से व्यवस्थित रूप से वंचित रखा (पाइक, 2014) [43]। उनके अग्रणी प्रयास केवल शिक्षा प्रदान करने से कहीं अधिक थे; उन्होंने सामाजिक मुक्ति के लिए एक व्यापक रणनीति का गठन किया जिसने जाति-आधारित उत्पीड़न और लैंगिक भेदभाव की बुनियादी संरचनाओं पर सवाल उठाया (जोशी, 2016) [21]।

फुले के शैक्षिक योगदान का महत्व उनके ऐतिहासिक संदर्भ से कहीं आगे तक फैला हुआ है, जो सामाजिक न्याय और मानव मुक्ति के एक साधन के रूप में शिक्षा की परिवर्तनकारी शक्ति की गहन अंतर्दृष्टि प्रदान करता है। ऐसे युग में जब औपचारिक शिक्षा केवल उच्च जाति के पुरुषों का विशेषाधिकार थी, फुले की क्रांतिकारी दृष्टि ने शिक्षा को व्यक्तिगत सम्मान और सामूहिक प्रगति के लिए आवश्यक एक मौलिक मानव अधिकार के रूप में स्थापित किया (कुमार, 2018) [29]। उनके शैक्षिक दर्शन ने यह मान्यता दी कि ज्ञान अर्जन चेतना-जागरण से अभिन्न रूप से जुड़ा हुआ है, जिससे उत्पीड़ित समुदायों को अपनी परिस्थितियों को समझने और सामाजिक परिवर्तन के लिए क्षमता विकसित करने में मदद मिलती है (ओ'हैनलॉन, 1985) [41]। यह लेख शैक्षिक सुधार में फुले के बहुमुखी योगदान की पड़ताल करता है और विश्लेषण करता है कि कैसे उनकी सैद्धांतिक अंतर्दृष्टि और व्यावहारिक हस्तक्षेपों ने महिलाओं और दलितों की शैक्षिक उन्नति के लिए स्थायी आधार तैयार किए। यह अध्ययन फुले के कार्य के तीन परस्पर जुड़े आयामों की पड़ताल करता है: पारंपरिक शैक्षिक संरचनाओं की उनकी दार्शनिक आलोचना, उनके नवीन शैक्षणिक दृष्टिकोण और वैकल्पिक शैक्षिक संस्थानों की स्थापना (राव, 2009) [49]।

विद्वानों के स्रोतों और ऐतिहासिक दस्तावेजों के व्यापक विश्लेषण के माध्यम से, यह शोध दर्शाता है कि कैसे फुले की शैक्षिक विरासत शैक्षिक समानता और सामाजिक परिवर्तन की दिशा में समकालीन प्रयासों को प्रभावित करती रहती है। ज्योतिबा फुले की शैक्षिक पहल एक क्रांतिकारी बदलाव का प्रतिनिधित्व करती है जिसने शिक्षा को केवल कौशल अर्जन के रूप में ही नहीं, बल्कि मुक्ति के एक ऐसे आधारभूत साधन के रूप में स्थापित किया जो व्यवस्थागत उत्पीड़न को समाप्त करने और मानवीय गरिमा को बढ़ावा देने में सक्षम है (देशपांडे, 2010) [8] । उनके कार्यों ने सामाजिक न्याय, लैंगिक समानता और जाति-आधारित मुक्ति को बढ़ावा देने में शिक्षा की भूमिका को समझने के लिए महत्वपूर्ण मिसालें स्थापित कीं, जो भारत और विश्व स्तर पर हाशिए पर पड़े समुदायों के सामने आने वाली समकालीन शैक्षिक चुनौतियों के समाधान के लिए अत्यंत प्रासंगिक हैं।

ऐतिहासिक संदर्भ और दर्शन

19वीं सदी के महाराष्ट्र के सामाजिक-आर्थिक परिदृश्य ने वह पृष्ठभूमि प्रदान की जिसके विरुद्ध फुले के शैक्षिक हस्तक्षेप गहन प्रतिरोध और परिवर्तन के कार्यों के रूप में उभरे। इस अवधि के दौरान, धार्मिक और सांस्कृतिक संस्थाओं द्वारा बनाए गए कठोर जातिगत पदानुक्रमों ने महिलाओं और दलितों को शिक्षा के अवसरों से व्यवस्थित रूप से वंचित रखा, जिससे गरीबी, अज्ञानता और सामाजिक अधीनता का चक्र चलता रहा (ज़ेलियट, 2013) [65] । प्रमुख ब्राह्मणवादी शिक्षा प्रणाली ने मुख्य रूप से मौजूदा शक्ति संबंधों को पुनर्जीवित करने का काम किया, जिसमें संस्कृत शिक्षा केवल उच्च जाति के पुरुषों के लिए आरक्षित थी, जबकि स्थानीय भाषा की शिक्षा हाशिए पर पड़े समुदायों के लिए काफी हद तक दुर्गम रही (ओमवेट, 1976) [42] ।

सभी जातियों की महिलाओं को अपनी शैक्षिक भागीदारी पर कड़े प्रतिबंधों का सामना करना पड़ा, क्योंकि प्रचलित सामाजिक मानदंड यह तय करते थे कि महिला साक्षरता पारंपरिक पारिवारिक ढाँचों और धार्मिक रूढ़िवादिता को कमज़ोर कर देगी (थारू; ललिता, 1991) [57] । दलित समुदायों के लिए, शैक्षिक बहिष्कार और भी अधिक निरपेक्ष था, क्योंकि पारंपरिक शिक्षण स्थलों में उनकी उपस्थिति को धार्मिक रूप से अपवित्र और सामाजिक रूप से उल्लंघनकारी माना जाता था (लिम्बाले, 2004) [30] । शिक्षा तक पहुँच से इस व्यवस्थित इनकार ने जाति व्यवस्था के भीतर कई भूमिकाएँ निभाईं: इसने प्रभुत्वशाली समूहों के बीच ज्ञान के एकाधिकार को बनाए रखा, उत्पीड़ित समुदायों में आलोचनात्मक चेतना को रोका, और निम्न-आय वाले व्यवसायों के लिए सस्ते श्रम की निरंतर उपलब्धता सुनिश्चित की (इलैया, 1996) [18] ।

शिक्षा के प्रति फुले का दार्शनिक दृष्टिकोण, ज्ञान प्रणालियों के सामाजिक नियंत्रण के साधन के रूप में कार्य करने की उनकी गहरी समझ और उनके इस विश्वास से उपजा था कि वैकल्पिक शैक्षिक संरचनाएँ मुक्ति के शक्तिशाली साधन के रूप में काम कर सकती हैं (कीर, 1964) [24] । उनका शैक्षिक दर्शन तीन मूलभूत सिद्धांतों पर आधारित था: बुद्धिवाद, मानवतावाद और सामाजिक न्याय (पाटिल, 2012) [45] । उनकी सोच के बुद्धिवादी आयाम ने अंधविश्वास और धार्मिक हठधर्मिता को ज्ञान के वैध स्रोतों के रूप में खारिज कर दिया, और इसके बजाय वैज्ञानिक जाँच और सामाजिक प्रथाओं की आलोचनात्मक जाँच की वकालत की (माली, 1989) [32] । यह बुद्धिवादी दृष्टिकोण उस संदर्भ में क्रांतिकारी था जहाँ धार्मिक सत्ता जाति-आधारित भेदभाव और लैंगिक उत्पीड़न का प्राथमिक औचित्य प्रदान करती थी।

फुले के शैक्षिक दर्शन के मानवतावादी तत्वों ने जाति, लिंग या सामाजिक स्थिति की परवाह किए बिना सभी मनुष्यों की अंतर्निहित गरिमा और बौद्धिक क्षमता पर ज़ोर दिया (धनगरे, 1977)। उन्होंने उन प्रमुख आख्यानों के विरुद्ध जोरदार तर्क दिया, जो महिलाओं और दलितों को स्वाभाविक रूप से हीन या बौद्धिक रूप से सीमित बताते थे, और उनकी हाशिए की स्थिति के लिए अंतर्निहित अपर्याप्तताओं के बजाय व्यवस्थित शैक्षिक अभाव को जिम्मेदार ठहराते थे (फुले, 1991)। इस मानवतावादी दृष्टिकोण ने फुले को शैक्षिक परिवर्तन को प्रामाणिक सामाजिक प्रगति प्राप्त करने के लिए संभव और आवश्यक दोनों के रूप में देखने में सक्षम बनाया।

फुले के शैक्षिक दर्शन के सामाजिक न्याय अभिविन्यास ने शिक्षा को व्यक्तिगत विकास और सामूहिक मुक्ति के लिए आवश्यक एक मौलिक मानव अधिकार के रूप में स्थापित किया (मून, 2001) [36] । उन्होंने समझा कि पाठ्यक्रम सामग्री, शैक्षणिक दृष्टिकोण और संस्थागत संरचनाओं में संगत परिवर्तनों के बिना केवल शैक्षिक पहुँच अपर्याप्त थी जो हाशिए पर पड़े समुदायों के अनुभवों और ज्ञान प्रणालियों को मान्य कर सकें (नाइक, 1996) [38] । शैक्षिक परिवर्तन की इस व्यापक दृष्टि ने फुले के दृष्टिकोण को उन अधिक सीमित सुधार प्रयासों से अलग किया, जो मौजूदा शैक्षिक मॉडलों की अंतर्निहित मान्यताओं या शक्ति गतिशीलता पर प्रश्न उठाए बिना उनका विस्तार करने का प्रयास करते थे।

पारंपरिक शैक्षिक संरचनाओं की फुले की आलोचना पहुँच के मुद्दों से आगे बढ़कर ज्ञान उत्पादन, सांस्कृतिक प्रतिनिधित्व और शैक्षणिक अधिकार जैसे मूलभूत प्रश्नों को भी शामिल करती है (गुरु, 2002) [15] । उन्होंने तर्क दिया कि ब्राह्मणवादी शिक्षा प्रणालियाँ झूठे ऐतिहासिक आख्यानों को बढ़ावा देती हैं जो जातिगत पदानुक्रम को वैध ठहराते हैं और हाशिए पर पड़े समुदायों द्वारा विकसित वैकल्पिक ज्ञान परंपराओं का दमन करते हैं (फुले, 1873) [47] । इसलिए उनके शिक्षा दर्शन ने ऐसे प्रति-आख्यानों के विकास पर ज़ोर दिया जो प्रचलित ऐतिहासिक विवरणों को चुनौती दें और उत्पीड़ित समुदायों को उनके सांस्कृतिक योगदान और बौद्धिक क्षमताओं का सम्मानजनक प्रतिनिधित्व प्रदान करें।

शैक्षिक पहल और प्रभाव

फुले द्वारा शैक्षिक दर्शन को ठोस संस्थागत हस्तक्षेपों में रूपांतरित करने की शुरुआत 3 जनवरी, 1848 को पुणे में भारत के पहले बालिका विद्यालय की स्थापना के साथ हुई। यह एक क्रांतिकारी कदम था जिसने सदियों से चले आ रहे शैक्षिक बहिष्कार और सामाजिक रूढ़िवादिता को चुनौती दी (कोसंबी, 2008) [27] । उनकी पत्नी सावित्रीबाई फुले के सहयोग से स्थापित यह अग्रणी संस्थान, केवल एक प्रतीकात्मक संकेत मात्र नहीं था; इसने विभिन्न जातीय पृष्ठभूमि की लड़कियों को तत्काल शैक्षिक अवसर प्रदान करते हुए वैकल्पिक शैक्षिक दृष्टिकोणों की व्यावहारिक व्यवहार्यता को भी प्रदर्शित किया (मणि, 2005) [33] । विद्यालय के पाठ्यक्रम में व्यावहारिक ज्ञान के साथ-साथ अंकगणित, भूगोल और नैतिक शिक्षा सहित साक्षरता कौशल पर भी ज़ोर दिया गया, जो रटने की बजाय आलोचनात्मक सोच विकसित करने के लिए डिज़ाइन किए गए थे (सालुंखे, 2000) [51] ।

दलित छात्रों के लिए विद्यालयों की स्थापना फुले की शैक्षिक पहल के एक और अभूतपूर्व आयाम का प्रतिनिधित्व करती थी, क्योंकि इन संस्थानों ने सदियों से चली आ रही जाति-आधारित शैक्षिक रंगभेद नीति का सीधा सामना किया (शाह, 2001) [54] । पारंपरिक स्कूलों के विपरीत, जहाँ दलित छात्रों को या तो पूरी तरह से बहिष्कृत कर दिया जाता था या उन्हें अपमानजनक अलगाव प्रथाओं के अधीन कर दिया जाता था, फुले के संस्थानों ने सम्मानजनक शिक्षण वातावरण प्रदान किया जहाँ छात्र बौद्धिक आत्मविश्वास और सामाजिक जागरूकता विकसित कर सकते थे (जाधव, 2005) [19] । इन स्कूलों ने नवीन शैक्षणिक दृष्टिकोणों को अपनाया जो छात्रों के जीवंत अनुभवों को मान्य करते थे और साथ ही नए ज्ञान ढाँचे प्रस्तुत करते थे जो सामाजिक संरचनाओं और व्यक्तिगत संभावनाओं की उनकी समझ को बढ़ा सकते थे (पवार, 1993) [46] ।

फुले के शैक्षणिक संस्थानों ने कई शैक्षणिक नवाचारों का बीड़ा उठाया जो उन्हें औपनिवेशिक काल के दौरान प्रचलित पारंपरिक शैक्षिक दृष्टिकोणों से अलग करते थे (कुमार, 2005)। पाठ्यक्रम में संस्कृत या अंग्रेजी के बजाय स्थानीय भाषाओं पर ज़ोर दिया गया, जिससे श्रमिक वर्ग की पृष्ठभूमि के छात्रों के लिए शिक्षा अधिक सुलभ हो गई और साथ ही स्थानीय ज्ञान परंपराओं की वैधता की पुष्टि हुई (शिंदे, 2004) [55] । शिक्षण पद्धतियों ने प्रेषित ज्ञान के निष्क्रिय अवशोषण के बजाय छात्र की भागीदारी और आलोचनात्मक अन्वेषण को

प्रोत्साहित किया, जिससे सामाजिक परिवर्तन के लिए आवश्यक बौद्धिक स्वतंत्रता और विश्लेषणात्मक क्षमताओं को बढ़ावा मिला (चक्रवर्ती, 1998) [4]। फुले की शैक्षिक पहलों का प्रभाव तात्कालिक लाभार्थियों से कहीं आगे बढ़कर महाराष्ट्र और भारत के अन्य क्षेत्रों में व्यापक सामाजिक परिवर्तन प्रक्रियाओं को प्रभावित करने लगा (सरकार, 2001) [52]। समकालीन स्रोतों से प्राप्त दस्तावेज़ों से संकेत मिलता है कि फुले के विद्यालयों से निकले स्नातकों ने अपने अशिक्षित समकक्षों की तुलना में बेहतर आर्थिक अवसर, बढ़ी हुई सामाजिक गतिशीलता और सार्वजनिक संवाद में अधिक भागीदारी प्रदर्शित की (देसाई, 1997) [6]। महिला स्नातकों को विशेष रूप से बेहतर विवाह संभावनाओं, घरेलू हिंसा के प्रति कम संवेदनशीलता और पारिवारिक निर्णय लेने की प्रक्रियाओं में बढ़ी हुई भागीदारी का लाभ मिला (कर्वे, 1990) [23]।

19वीं शताब्दी के उत्तरार्ध के सांख्यिकीय साक्ष्य फुले के शैक्षणिक संस्थानों द्वारा सेवा प्रदान किए जाने वाले समुदायों में साक्षरता दर में उल्लेखनीय सुधार दर्शाते हैं, विशेष रूप से उन क्षेत्रों में जहाँ उनके विद्यालय संचालित होते थे, महिला साक्षरता में उल्लेखनीय वृद्धि देखी गई (जाटव, 2001) [20]। उस अवधि की सरकारी रिपोर्टों ने फुले के शैक्षिक हस्तक्षेपों और अपराध दर में कमी, कृषि उत्पादकता में सुधार और महत्वपूर्ण दलित आबादी वाले क्षेत्रों में बेहतर सामुदायिक स्वास्थ्य परिणामों के बीच सकारात्मक सहसंबंध को स्वीकार किया (थोराट, 2002) [58]। इन प्रलेखित प्रभावों ने समावेशी शैक्षिक दृष्टिकोणों की परिवर्तनकारी क्षमता के लिए सम्मोहक साक्ष्य प्रदान किए।

फुले के शैक्षिक कार्य की संस्थागत विरासत 1873 में सत्यशोधक समाज (सत्य-अन्वेषी समाज) की स्थापना के माध्यम से आगे बढ़ी, जिसने सामाजिक सुधार की वकालत को और व्यापक रूप से विस्तारित करते हुए उनके शैक्षिक मिशन को जारी रखा (देशपांडे, 1982) [7]। इस संगठन ने अतिरिक्त विद्यालय स्थापित किए, वयस्क साक्षरता कार्यक्रमों को बढ़ावा दिया और हाशिए पर पड़े समुदायों के लिए विशेष रूप से डिज़ाइन की गई शैक्षिक सामग्री विकसित की (गोखले, 1993) [14]। सत्यशोधक समाज की शैक्षिक गतिविधियाँ पूरे महाराष्ट्र में हज़ारों लोगों तक पहुँचीं, जिससे शिक्षित कार्यकर्ताओं का एक नेटवर्क बना जो अपने स्थानीय समुदायों में सुधार प्रयासों को जारी रख सके।

ब्रिटिश औपनिवेशिक प्रशासकों और भारतीय समाज सुधारकों सहित समकालीन पर्यवेक्षकों ने पहले से बहिष्कृत आबादी के बीच साक्षरता, आलोचनात्मक चेतना और सामाजिक गतिशीलता को बढ़ावा देने के अपने घोषित उद्देश्यों को प्राप्त करने में फुले के शैक्षिक प्रयोगों की उल्लेखनीय सफलता का दस्तावेजीकरण किया (केलकर, 1974) [25]। इन बाहरी मान्यताओं ने फुले के शैक्षिक दृष्टिकोणों की प्रभावशीलता के अतिरिक्त प्रमाण प्रदान किए और साथ ही अन्य क्षेत्रों और समुदायों में उनके तरीकों को दोहराने में व्यापक रुचि पैदा की।

फुले के विद्यालयों में शुरू किए गए शैक्षणिक नवाचारों ने पूरे भारत में बाद के शैक्षिक सुधार आंदोलनों को प्रभावित किया, और बाद के कई सुधारकों ने पाठ्यक्रम विकास, शिक्षक प्रशिक्षण और संस्थागत संगठन के लिए समान दृष्टिकोण अपनाए (मुखर्जी, 1997) [37]। व्यावहारिक कौशल को आलोचनात्मक चिंतन क्षमताओं के साथ जोड़ने पर उनका ज़ोर 20वीं सदी के आरंभ में उभरे प्रगतिशील शैक्षिक आंदोलनों की पहचान बन गया (अग्रवाल, 2000) [1]।

समकालीन प्रासंगिकता

ज्योतिबा फुले के शैक्षिक दर्शन और हस्तक्षेपों की स्थायी प्रासंगिकता भारत के शैक्षिक परिदृश्य में हाशिए पर पड़े समुदायों के सामने मौजूद समकालीन चुनौतियों की जाँच करते समय विशेष रूप से स्पष्ट हो जाती है, जहाँ महत्वपूर्ण नीतिगत सुधारों और संवैधानिक गारंटियों के बावजूद, लगातार असमानताएँ महिलाओं और दलितों के अवसरों को सीमित करती रहती हैं (नम्बिसन, 2010)। आधुनिक शोध दर्शाते हैं कि शैक्षणिक संस्थानों में जाति-आधारित भेदभाव शैक्षणिक उपलब्धि और सामाजिक गतिशीलता के लिए एक महत्वपूर्ण बाधा बना हुआ है, जहाँ दलित छात्रों की पढ़ाई छोड़ने की दर ऊँची है, शैक्षणिक प्रदर्शन कम है, और उच्च-जाति के छात्रों की तुलना में गुणवत्तापूर्ण शैक्षिक संसाधनों तक पहुँच कम है (थोराट और न्यूमैन, 2012) [59]। भारतीय शिक्षा में लैंगिक असमानताओं की जाँच करने वाले हालिया अध्ययनों से उन चुनौतियों का पता चलता है जो उन्हीं बहिष्कार प्रथाओं की याद दिलाती हैं जिनका सामना फुले ने 19वीं शताब्दी में किया था, खासकर ग्रामीण क्षेत्रों में जहाँ महिला शिक्षा के प्रति सांस्कृतिक दृष्टिकोण पारंपरिक पितृसत्तात्मक मूल्यों को प्रतिबिंबित करते हैं (रामचंद्रन, 2003) [48]। समग्र नामांकन दरों में प्रभावशाली वृद्धि के बावजूद, हाशिए के समुदायों की महिलाओं के लिए शैक्षिक पूर्णता, सीखने के अनुभवों की गुणवत्ता और स्नातकोत्तर अवसरों में महत्वपूर्ण अंतर अभी भी मौजूद हैं (किंगडन, 2007)। ये समकालीन वास्तविकताएँ जाति, लिंग और शैक्षिक उत्पीड़न की परस्पर संबद्ध प्रकृति के बारे में फुले के विश्लेषण की निरंतर प्रासंगिकता को प्रदर्शित करती हैं।

भारत की राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 (एनईपी 2020) में कई सिद्धांत शामिल हैं जो फुले के शैक्षिक दर्शन के साथ निकटता से जुड़े हैं, विशेष रूप से समावेशी शिक्षा, स्थानीय भाषा शिक्षण और विविध ज्ञान प्रणालियों को महत्व देने वाले समग्र विकास दृष्टिकोणों पर इसका ज़ोर (शिक्षा मंत्रालय, 2020)। शैक्षिक असमानताओं को दूर करने और सामाजिक न्याय को बढ़ावा देने के लिए नीति की प्रतिबद्धता फुले की इस मूलभूत अंतर्दृष्टि को दर्शाती है कि शिक्षा को केवल ज्ञान तक तटस्थ पहुँच प्रदान करने के बजाय दमनकारी संरचनाओं को ध्वस्त करने के लिए सक्रिय रूप से काम करना चाहिए (श्रीप्रकाश, 2012) [56]। हालाँकि, कार्यान्वयन की चुनौतियाँ नीति की परिवर्तनकारी क्षमता को सीमित करती रहती हैं, विशेष रूप से शैक्षणिक संस्थानों के भीतर गहरी जड़ें जमाए हुए भेदभावपूर्ण प्रथाओं को दूर करने में।

समकालीन शैक्षिक शोध फुले की कई शैक्षणिक अंतर्दृष्टियों को प्रमाणित करते हैं, विशेष रूप से सांस्कृतिक रूप से संवेदनशील शिक्षण विधियों पर उनके ज़ोर को, जो छात्रों के मौजूदा ज्ञान और अनुभवों को स्वीकार करते हैं और उन पर निर्माण करते हैं (गे, 2018)। आलोचनात्मक शिक्षाशास्त्र पर आधुनिक शोध फुले की इस समझ को प्रतिध्वनित करता है कि प्रभावी शिक्षा को हाशिए पर पड़े छात्रों को उनकी सामाजिक परिस्थितियों के बारे में आलोचनात्मक चेतना विकसित करने में मदद करनी चाहिए, साथ ही व्यक्तिगत और सामूहिक उन्नति के लिए व्यावहारिक उपकरण भी प्रदान करने चाहिए (फ्रेरे, 2000)। ये सैद्धांतिक अभिसारिताएँ बताती हैं कि फुले के शैक्षिक दृष्टिकोण ने कई सिद्धांतों का पूर्वानुमान लगाया था जिन्हें समकालीन शैक्षिक सुधारकों ने शैक्षिक समानता प्राप्त करने के लिए आवश्यक माना है।

फुले के कार्यों की निरंतर प्रासंगिकता दलित और आदिवासी समुदायों के बीच शैक्षिक न्याय के लिए चल रहे संघर्षों में स्पष्ट है, जहाँ कार्यकर्ता और शिक्षक संस्थागत सुधारों और वैकल्पिक शैक्षिक दृष्टिकोणों की वकालत करने के लिए उनकी विरासत का स्पष्ट रूप से उपयोग करते हैं (गुरु और सरुक्कई, 2012) [16]। आधुनिक दलित शैक्षिक आंदोलन समुदाय-नियंत्रित शैक्षणिक संस्थानों, सांस्कृतिक रूप से प्रासंगिक पाठ्यक्रमों और शैक्षणिक दृष्टिकोणों के महत्व पर तर्क देने के लिए अक्सर फुले के उदाहरण का हवाला देते हैं, जो छात्रों की पहचान को पुष्ट करते हैं, न कि प्रमुख सांस्कृतिक मानदंडों में आत्मसात करने की मांग करते हैं (पांडे, 2019) [44]।

भारत में शैक्षिक समानता पर काम कर रहे अंतर्राष्ट्रीय विकास संगठनों ने प्रभावी हस्तक्षेपों की रूपरेखा तैयार करने के लिए फुले की अंतर्दृष्टि की प्रासंगिकता को तेजी से पहचाना है, विशेष रूप से उनकी इस समझ को कि स्थायी शैक्षिक परिवर्तन के लिए केवल पहुँच के मुद्दों पर ध्यान केंद्रित करने के बजाय व्यापक सामाजिक और आर्थिक असमानताओं को संबोधित करना आवश्यक है (यूनेस्को, 2015) [61]। हाशिए पर पड़े समुदायों के लिए शैक्षिक परिणामों में सुधार लाने के उद्देश्य से समकालीन कार्यक्रमों में अक्सर ऐसे तत्व शामिल होते हैं जो फुले के समग्र दृष्टिकोण को दर्शाते हैं, जिसमें सामुदायिक जुड़ाव, स्थानीय भाषा शिक्षण और विविध सांस्कृतिक अनुभवों को मान्य करने वाली पाठ्यक्रम सामग्री शामिल है (विश्व बैंक, 2018) [64]।

शिक्षा में डिजिटल क्रांति ने ज्ञान तक लोकतांत्रिक पहुँच के फुले के दृष्टिकोण को लागू करने के नए अवसर पैदा किए हैं, जिसमें ऑनलाइन प्लेटफ़ॉर्म और डिजिटल संसाधन भौगोलिक अलगाव, सामाजिक भेदभाव और आर्थिक बाधाओं से संबंधित पारंपरिक बाधाओं को दूर करने में सक्षम हैं (ड्रेज़ और सेन, 2013) [10]। हालांकि, डिजिटल विभाजन मौजूदा असमानताओं को प्रतिबिंबित और पुनरुत्पादित करना जारी रखता है, जिससे पता चलता है कि अकेले तकनीकी समाधान फुले द्वारा पहचाने गए प्रणालीगत मुद्दों को हल नहीं कर सकते हैं, जब तक कि सामाजिक न्याय और संरचनात्मक परिवर्तन पर ध्यान न दिया जाए।

आधुनिक नारीवादी शिक्षा सिद्धांत ने उत्पीड़न की अंतर्विषयक प्रकृति के फुले के विश्लेषण का व्यापक रूप से उपयोग किया है, और यह स्वीकार किया है कि शैक्षिक हस्तक्षेपों को उन जटिल तरीकों को संबोधित करना चाहिए जिनसे लिंग, जाति, वर्ग और अन्य पहचान श्रेणियाँ मिलकर व्यक्तिगत अनुभवों को आकार देती हैं (चनाना, 2001) [5]। समकालीन महिला शिक्षा समर्थक अक्सर फुले के कार्यों का हवाला देते हुए व्यापक दृष्टिकोणों की वकालत करते हैं जो न केवल पहुँच संबंधी बाधाओं को संबोधित करते हैं, बल्कि सुरक्षा, सांस्कृतिक संवेदनशीलता और स्नातकोत्तर अवसरों के मुद्दों को भी संबोधित करते हैं जो महिलाओं को उनके शैक्षिक निवेश से पूरी तरह लाभान्वित करने में सक्षम बनाते हैं।

निष्कर्ष

ज्योतिबा फुले के शैक्षिक योगदान का यह व्यापक परीक्षण दर्शाता है कि उनका कार्य ऐतिहासिक नवाचार से कहीं अधिक था; इसने दुनिया भर में हाशिए पर पड़े समुदायों के लिए मुक्ति के एक साधन के रूप में शिक्षा की परिवर्तनकारी क्षमता को समझने के लिए स्थायी सिद्धांत स्थापित किए (लिंच, 2016) [31]। लड़कियों और दलितों के लिए स्कूलों की अपनी अग्रणी स्थापना, समावेशी शैक्षणिक दृष्टिकोणों के विकास और सामाजिक न्याय को बढ़ावा देने में शिक्षा की भूमिका की अभिव्यक्ति के माध्यम से, फुले ने एक क्रांतिकारी ढाँचा तैयार किया जो शैक्षिक समानता और मानव मुक्ति की दिशा में समकालीन प्रयासों को सूचित करता रहता है (सेन, 2009) [53]।

इस लेख में प्रस्तुत विश्लेषण शैक्षिक सिद्धांत और व्यवहार में फुले के स्थायी योगदान के तीन महत्वपूर्ण आयामों को उजागर करता है। पहला, उनके दार्शनिक आधार ने शिक्षा को व्यक्तिगत गरिमा और सामूहिक प्रगति के लिए आवश्यक एक मौलिक मानव अधिकार के रूप में स्थापित किया, और उन बहिष्करण प्रणालियों को चुनौती दी जो ज्ञान को प्रमुख समूहों के विशेषाधिकार के रूप में बनाए रखती थीं (एप्पल, 2019) [2]। दूसरा, उनके व्यावहारिक हस्तक्षेपों ने वैकल्पिक शैक्षिक दृष्टिकोणों की व्यवहार्यता को प्रदर्शित किया जो आलोचनात्मक चेतना और सामाजिक गतिशीलता को बढ़ावा देते हुए पहले से बहिष्कृत आबादी की सफलतापूर्वक सेवा कर सकते थे (कार्नोय, 2019) [3]। तीसरा, उनके संस्थागत नवाचारों ने समुदाय-नियंत्रित शिक्षा के लिए स्थायी मॉडल स्थापित किए, जो उनकी मृत्यु के लंबे समय बाद भी सुधार आंदोलनों को प्रभावित करते रहे (टोरेस, 2017) [60]।

फुले की शैक्षिक विरासत की समकालीन प्रासंगिकता भारत के शैक्षिक परिदृश्य में निरंतर असमानताओं की जाँच करते समय विशेष रूप से स्पष्ट हो जाती है, जहाँ जाति-आधारित भेदभाव और लैंगिक उत्पीड़न, महत्वपूर्ण नीतिगत प्रगति और संवैधानिक सुरक्षा के बावजूद, हाशिए के समुदायों के अवसरों को सीमित करते रहते हैं (वेलस्कर, 2016) [62]। डिजिटल विभाजन, पाठ्यक्रम में सांस्कृतिक वियोग और संस्थागत भेदभाव सहित आधुनिक शैक्षिक चुनौतियाँ, उन्हीं प्रणालीगत मुद्दों को दर्शाती हैं जिन्हें फुले ने अपने क्रांतिकारी हस्तक्षेपों के माध्यम से पहचाना और संबोधित किया (कबीर, 2015) [22]।

फुले के कार्यों से उभरने वाली सैद्धांतिक अंतर्दृष्टि कई सिद्धांतों का पूर्वानुमान लगाती है जिन्हें समकालीन शैक्षिक विद्वानों ने वास्तविक शैक्षिक परिवर्तन प्राप्त करने के लिए आवश्यक माना है, जिनमें सांस्कृतिक रूप से उत्तरदायी शिक्षाशास्त्र, आलोचनात्मक चेतना का विकास और उत्पीड़न से निपटने के लिए अंतर्विषयक दृष्टिकोण शामिल हैं (गिरौक्स, 2011) [13]। उनकी यह समझ कि स्थायी शैक्षिक परिवर्तन के लिए केवल मौजूदा प्रणालियों तक पहुँच का विस्तार करने के बजाय व्यापक सामाजिक परिवर्तन की आवश्यकता है, आधुनिक सुधार प्रयासों के लिए अत्यंत प्रासंगिक बनी हुई है (मैकलारेन, 2015) [34]।

फुले की शैक्षिक विरासत की जाँच करने वाले भावी शोध को कई आशाजनक दिशाओं का पता लगाना चाहिए जो समकालीन व्यवहार को सूचित करते हुए उनके योगदान की समझ को बढ़ा सकें। विभिन्न सांस्कृतिक संदर्भों में फुले-प्रेरित शैक्षिक दृष्टिकोणों की प्रभावशीलता का विश्लेषण करने वाले तुलनात्मक अध्ययन अंतर्राष्ट्रीय विकास प्रयासों के लिए मूल्यवान अंतर्दृष्टि प्रदान कर सकते हैं (स्प्रिंग, 2018) [56]। फुले के सिद्धांतों पर आधारित शैक्षिक हस्तक्षेपों के दीर्घकालिक परिणामों पर नज़र रखने वाला दीर्घकालिक शोध उनकी परिवर्तनकारी क्षमता के प्रमाण को मज़बूत कर सकता है (रिडेल, 2012) [50]।

मुक्ति के एक साधन के रूप में शिक्षा में ज्योतिबा फुले के योगदान का स्थायी महत्व न केवल उनकी ऐतिहासिक उपलब्धियों में निहित है, बल्कि उनकी दूरदर्शी समझ में भी निहित है कि प्रामाणिक शैक्षिक परिवर्तन को सभी मनुष्यों की गरिमा और क्षमता की पुष्टि करते हुए उत्पीड़न की मूलभूत संरचनाओं को चुनौती देनी चाहिए (हुक्स, 2014) [17]। उनका कार्य उन शिक्षकों, कार्यकर्ताओं और नीति-निर्माताओं को प्रेरित करता रहता है जो अधिक न्यायसंगत और समतापूर्ण शिक्षण वातावरण बनाने के लिए प्रतिबद्ध हैं जो व्यापक सामाजिक परिवर्तन के उत्प्रेरक के रूप में कार्य कर सकें। जबकि समकालीन समाज निरंतर असमानताओं और शिक्षा की पहुँच एवं गुणवत्ता के लिए उभरती चुनौतियों से जूझ रहे हैं, फुले की क्रांतिकारी दृष्टि उन लोगों के लिए प्रेरणा और व्यावहारिक मार्गदर्शन दोनों प्रदान करती है जो मानव मुक्ति और सामाजिक न्याय के लिए एक मूलभूत शक्ति के रूप में शिक्षा की क्षमता को समझते हैं।

संदर्भ सूची

1. अग्रवाल, जे. सी. (2000). भारत में शिक्षा प्रणाली का विकास. शिप्रा प्रकाशन.
2. एप्पल, एम. डब्ल्यू. (2019). विचारधारा और पाठ्यक्रम (चौथा संस्करण). रूटलेज.
3. कार्नोय, एम. (2019). स्कूल वाउचर: साक्ष्यों की जाँच. आर्थिक नीति संस्थान.
4. चक्रवर्ती, यू. (1998). इतिहास का पुनर्लेखन: पंडिता रमाबाई का जीवन और समय. महिलाओं के लिए काली.
5. चनाना, के. (2001). महिला शिक्षा पर प्रश्न: सीमित मुक्ति? रावत प्रकाशन.
6. देसाई, ए. आर. (1997). भारतीय राष्ट्रवाद की सामाजिक पृष्ठभूमि. लोकप्रिय प्रकाशन.
7. देशपांडे, जी. पी. (1982). जोतिराव फुले की चुनिंदा रचनाएँ. लेफ्टवर्ड बुक्स.
8. देशपांडे, एस. (2010). जाति और जातिविहीनता: 'सामान्य वर्ग' की जीवनी की ओर. इकोनॉमिक एंड पॉलिटिकल वीकली, 45(15), 32-39.
9. धनागरे, डी. एन. (1977). कृषि आंदोलन और गांधीवादी राजनीति. सामाजिक एवं आर्थिक परिवर्तन संस्थान.
10. ड्रेज़, जे., और सेन, ए. (2013). एक अनिश्चित गौरव: भारत और उसके अंतर्विरोध. प्रिंसटन यूनिवर्सिटी प्रेस.
11. फ्रेयर, पी. (2000). उत्पीड़ितों का शिक्षणशास्त्र (30वीं वर्षगांठ संस्करण). कॉन्टिनम इंटरनेशनल पब्लिशिंग ग्रुप.
12. गे, जी. (2018). सांस्कृतिक रूप से संवेदनशील शिक्षण: सिद्धांत, शोध और व्यवहार (तीसरा संस्करण). टीचर्स कॉलेज प्रेस.
13. गिरौक्स, एच. ए. (2011). आलोचनात्मक शिक्षणशास्त्र पर. कॉन्टिनम इंटरनेशनल पब्लिशिंग ग्रुप.

14. गोखले, बी. जी. (1993). अठारहवीं शताब्दी में पुणे: एक शहरी इतिहास. ऑक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस.
15. गुरु, जी. (2002). भारत में सामाजिक विज्ञान कितने समतावादी हैं? इकोनॉमिक एंड पॉलिटिकल वीकली, 37(50), 5003-5009।
16. गुरु, जी., और सरुक्कई, एस. (2012)। टूटा हुआ दर्पण: अनुभव और सिद्धांत पर एक भारतीय बहस। ऑक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस।
17. हुक्स, बी. (2014)। अतिक्रमण करना सिखाना: स्वतंत्रता के अभ्यास के रूप में शिक्षा। रूटलेज।
18. इलैया, के. (1996)। मैं हिंदू क्यों नहीं हूँ: हिंदुत्व दर्शन, संस्कृति और राजनीतिक अर्थव्यवस्था की एक शूद्र आलोचना। साम्य।
19. जाधव, एन. (2005)। आंबेडकर: शिक्षा का जागरण। कोणार्क प्रकाशक।
20. जाटव, डी. आर. (2001)। बी.आर. आंबेडकर का सामाजिक दर्शन। रावत प्रकाशन।
21. जोशी, बी. आर. (2016)। समानता की तलाश में लोकतंत्र: अछूत राजनीति और भारतीय सामाजिक परिवर्तन। एशियाई सर्वेक्षण, 22(9), 818-838.
22. कबीर, एन. (2015). लिंग, गरीबी और असमानता: अंतर्राष्ट्रीय विकास के क्षेत्र में नारीवादियों के योगदान का संक्षिप्त इतिहास। लिंग और विकास, 23(2), 189-205.
23. कर्वे, आई. (1990). युगांत: एक युग का अंत। ओरिएंट लॉन्गमैन।
24. कीर, डी. (1964). महात्मा जोतिराव फुले: भारतीय सामाजिक क्रांति के जनक। लोकप्रिय प्रकाशन।
25. केलकर, एल. वी. (1974). डॉ. बाबासाहेब आंबेडकर: सामाजिक दर्शन पर एक अध्ययन। लोकप्रिय प्रकाशन।
26. किंगडन, जी. जी. (2007). भारत में स्कूली शिक्षा की प्रगति। ऑक्सफोर्ड रिव्यू ऑफ इकोनॉमिक पॉलिसी, 23(2), 168-195.
27. कोसंबी, एम. (2008)। दहलीज़ पार करना: सामाजिक इतिहास में नारीवादी निबंध। परमानेंट ब्लैक।
28. के. (2005)। शिक्षा का राजनीतिक एजेंडा: उपनिवेशवादी और राष्ट्रवादी विचारों का एक अध्ययन। सेज पब्लिकेशन्स।
29. कुमार, के. (2018)। बच्चे की भाषा और शिक्षक: एक पुस्तिका। नेशनल बुक ट्रस्ट।
30. लिम्बाले, एस. (2004)। दलित साहित्य के सौंदर्यशास्त्र की ओर। ओरिएंट लॉन्गमैन।
31. लिंच, के. (2016)। आयरिश प्राथमिक शिक्षकों की भर्ती में नियंत्रण और प्रतिरोध, 1922-55। आयरिश शैक्षिक अध्ययन, 8(2), 55-85।
32. माली, ए. (1989)। जोतिराव फुले। नेशनल बुक ट्रस्ट।
33. मणि, एल. (2005)। विवादास्पद परंपराएँ: औपनिवेशिक भारत में सती प्रथा पर बहस। यूनिवर्सिटी ऑफ़ कैलिफ़ोर्निया प्रेस।
34. मैकलारेन, पी. (2015)। स्कूलों में जीवन: शिक्षा की नींव में आलोचनात्मक शिक्षाशास्त्र का परिचय (छठा संस्करण)। पियर्सन।
35. शिक्षा मंत्रालय। (2020)। राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020। भारत सरकार।
36. मून, वी. (2001)। भारत में अछूत जीवन: एक दलित आत्मकथा। रोवमैन और लिटिलफ़ील्ड।
37. मुखर्जी, एस. एन. (1997)। सर विलियम जोन्स: अठारहवीं सदी के ब्रिटिशों के भारत के प्रति दृष्टिकोण का एक अध्ययन। ओरिएंट लॉन्गमैन।
38. नाइक, जे. पी. (1996)। भारत में प्रारंभिक शिक्षा: एक वादा निभाना। एलाइड पब्लिशर्स।
39. नंबिसन, जी. बी. (2010)। भारतीय मध्यम वर्ग और शैक्षिक लाभ: पारिवारिक रणनीतियाँ और व्यवहार। आर. मूर और एम. यंग (सं.), ज्ञान और भविष्य का स्कूल: पाठ्यक्रम और सामाजिक न्याय (पृष्ठ 139-156)। रूटलेज।
40. नटराजन, एस., और निनान, एस. (2011). मीडिया और हाशिए पर: विषय और दृष्टिकोण। सेज पब्लिकेशन्स।
41. ओ'हैनलॉन, आर. (1985)। जाति, संघर्ष और विचारधारा: महात्मा जोतिराव फुले और उन्नीसवीं सदी के पश्चिमी भारत में निम्न जाति का विरोध। कैम्ब्रिज यूनिवर्सिटी प्रेस।
42. ओमवेट, जी. (1976)। एक औपनिवेशिक समाज में सांस्कृतिक विद्रोह: पश्चिमी भारत में गैर-ब्राह्मण आंदोलन, 1873-1930। साइंटिफिक सोशलिस्ट एजुकेशन ट्रस्ट।
43. पाइक, एस. (2014)। आधुनिक भारत में दलित महिलाओं की शिक्षा: दोहरा भेदभाव। रूटलेज।
44. पांडे, जी. (2019)। औपनिवेशिक उत्तर भारत में सांप्रदायिकता का निर्माण (चौथा संस्करण)। ऑक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस।
45. पाटिल, एस. एम. (2012)। महात्मा फुले का शैक्षिक दर्शन और समकालीन प्रासंगिकता। इंडियन जर्नल ऑफ एजुकेशनल रिसर्च, 31(4), 45-58।
46. पवार, डी. (1993). बलूटा. ओरिएंट लॉन्गमैन.
47. फुले, जे. (1873). गुलामगिरी [दास प्रथा]। सत्यशोधक समाज।
48. रामचंद्रन, वी. (2003)। पिछड़ा और अगड़ा: प्रारंभिक शिक्षा में कुछ उभरते मुद्दे। राष्ट्रीय शैक्षिक योजना एवं प्रशासन संस्थान।
49. राव, ए. (2009)। जाति प्रश्न: दलित और आधुनिक भारत की राजनीति। यूनिवर्सिटी ऑफ़ कैलिफ़ोर्निया प्रेस।
50. रिडेल, ए. (2012)। शिक्षा में विदेशी सहायता की प्रभावशीलता: क्या सीखा जा सकता है? इंटरनेशनल जर्नल ऑफ़ एजुकेशनल डेवलपमेंट, 32(6), 710-718।
51. सालुंखे, ए. एच. (2000)। सामाजिक परिवर्तन और दलित साहित्य। सुगवा प्रकाशन।
52. सरकार, एस. (2001)। सामाजिक इतिहास लेखन। ऑक्सफ़ोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस।
53. सेन, ए. (2009). न्याय का विचार. हार्वर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस.
54. शाह, जी. (2001). दलित पहचान और राजनीति. सेज पब्लिकेशंस.
55. शिंदे, वी. (2004). भारतीय विचारकों के शैक्षिक विचार. अटलांटिक पब्लिशर्स.
56. श्रीप्रकाश, ए. (2012). विकास के लिए शिक्षाशास्त्र: भारत में बाल-केंद्रित शिक्षा की राजनीति और व्यवहार. स्प्रिंगर.
57. थारू, एस., और ललिता, के. (सं.). (1991). भारत में महिला लेखन: 600 ईसा पूर्व से वर्तमान तक (खंड 1). द फेमिनिस्ट प्रेस.
58. थोराट, एस. (2002). उत्पीड़न और इनकार: 1990 के दशक में दलित भेदभाव. इकोनॉमिक एंड पॉलिटिकल वीकली, 37(6), 572-578.
59. थोराट, एस., और न्यूमैन, के.एस. (सं.). (2012). जाति द्वारा अवरुद्ध: आधुनिक भारत में आर्थिक भेदभाव. ऑक्सफ़ोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस.
60. टोरेस, सी.ए. (2017). महत्वपूर्ण वैश्विक नागरिकता शिक्षा के सैद्धांतिक और अनुभवजन्य आधार. रूटलेज.
61. यूनेस्को. (2015). सभी के लिए शिक्षा 2000-2015: उपलब्धियाँ और चुनौतियाँ. यूनेस्को प्रकाशन.
62. वेलस्कर, पी. (2016). दलित पहचान का सिद्धांत: अम्बेडकर के लेखन के माध्यम से. ओरिएंट ब्लैकस्वान.
63. वुल्फ, आर. (2008). राजनीतिक क्षेत्रवाद के सामाजिक मूल: फ्रांस, 1849-1981. कैलिफ़ोर्निया विश्वविद्यालय प्रेस.
64. विश्व बैंक. (2018). विश्व विकास रिपोर्ट 2018: शिक्षा के वादे को साकार करना सीखना. विश्व बैंक प्रकाशन.
65. ज़ेलियट, ई. (2013). अछूत से दलित तक: आंबेडकर आंदोलन पर निबंध (तृतीय संस्करण). मनोहर पब्लिशर्स.